सत्ता की विरासत में कांटे और फूल

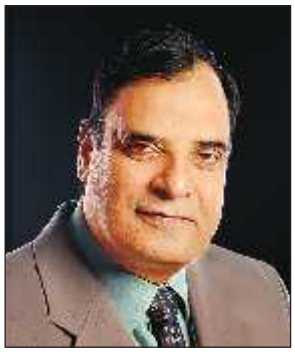

आलोक मेहता

संभवतः यह पहला अवसर है जब लोक सभा के निर्धारित चुनाव समय से महीनों पहले सत्ता पर दावेदारी के लिए जोरदार वाक-युद्ध और जोड़-तोड़ शुरू हो गई है। फिर भी कोई बंद कमरे में गंभीरता से यह दावा करने की स्थिति में नहीं है कि 2014 के लोक सभा के चुनाव के बाद सत्ता का सिंहासन किसे मिलेगा? भाजपा के कई नेता जीत पक्की होने का दावा करते हैं, तो कांग्रेस के नेता पिछली सारी गलतियों और गड़बड़ियों को नकारते हुए पुनः गठबंधन की मजबूरी के साथ सत्ता का सपना संजोए हुए हैं। वहीं मुलायम सिंह यादव, नीतीश कुमार, नवीन पटनायक, जयललिता जैसे क्षेत्रीय क्षत्रप तीसरे विकल्प की उम्मीदें संजो रहे हैं। यही कारण है कि राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने भी लोक सभा चुनाव में किसी दल को बहुमत न मिल पाने वाली पूर्व परिस्थितियों के दौरान बनी कानूनी फाइलों को पलटना शुरू कर दिया है। खंडित जनादेश देश के लिए अधिक खतरनाक साबित होगा।

नेहरू के बाद कौन? राव के बाद कौन? अटलजी के बाद कौन? अब मनमोहन सिंह के बाद कौन? सत्ता के गलियारों में समय-समय पर ऐसे सवाल गूंजते हैं, जिनका उत्तर आसान नहीं होता। कई बार दावेदार अनेक होते हैं और उत्तराधिकारी के रूप में जयप्रकाश नारायण और मोरारजी देसाई जैसे दिग्गज नेताओं के रहते सीधे-सादे ईमानदार लालबहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बन गए। श्रीमती इंदिरा गांधी की असामयिक नृशंस हत्या नहीं होती, तो शायद राजीव गांधी भी प्रधानमंत्री बनना नहीं चाहते। यों इंदिरा कैबिनेट में प्रणव मुखर्जी नं. 2 के रूप में विरासत की उम्मीद भी रखते थे। 1993 में जब मैंने 'राव के बाद कौन' पुस्तक लिखी, तो नरसिंह राव थोड़ा अप्रसन्न भी हुए और 15 अगस्त पर लाल किले की प्राचीर से भाषण देते हुए कहा- 'राव के बाद कौन जैसी पुस्तकें और लिखी जाएं।' फिर अनौपचारिक बातचीत में मुझसे कहा- 'माधवराव और राजेश पायलट को क्या जल्दी है प्रधानमंत्री बनने की?' मैंने अपनी पुस्तक में यह दर्शाने की कोशिश की थी कि नरसिंह राव के उत्तराधिकारी शरद पवार, अर्जुन सिंह, माधवराव सिंधिया, राजेश पायलट, चंद्रशेखर, अटल बिहारी वाजपेयी भी हो सकते हैं। राव 1995 तक इसी विश्वास में थे कि वह पुनः प्रधानमंत्री बन जाएंगे। उनकी यह इच्छा पूरी नहीं हुई। उनके बाद वाजपेयी, देवेगौड़ा, इंदर कुमार गुजराल तक प्रधानमंत्री बन गए, जिसकी किसी ने उम्मीद नहीं की थी। 1999 से 2004 तक सत्ता में रहने के बाद वाजपेयी या लालकृष्ण आडवाणी के प्रधानमंत्री बनने की उम्मीद की जा रही थी। लेकिन सत्ता के समीकरण बदले और सोनिया गांधी ने अप्रत्याशित ढंग से मनमोहन सिंह को प्रधानमंत्री बनवा दिया। 2009 में भाजपा ने आडवाणीजी को प्रधानमंत्री पद का उम्मीदवार घोषित किया। लेकिन वह सपना भी साकार नहीं हुआ।

अब 2014 के लिए भाजपा ने नरेंद्र मोदी को प्रधानमंत्री का उम्मीदवार घोषित कर दिया है। कांग्रेस ने औपचारिक रूप से प्रधानमंत्री पद के लिए किसी उम्मीदवार का नाम घोषित नहीं किया, लेकिन पार्टी के अधिकांश नेता राहुल गांधी को उत्तराधिकारी के रूप में मानने लगे हैं। स्वयं राहुल गांधी इस मुद्दे पर मौन हैं। मनमोहन सिंह ने भी राहुल के नेतृत्व को स्वीकारने की बात कह दी है। लेकिन मनमोहन सिंह के प्रिय सहयोगी-सलाहकार यह दावा करने में नहीं चूकते कि पिछले नौ वर्षों के दौरान मनमोहन सिंह ने जिस ढंग से विभिन्न गुटों, गठबंधन के सहयोगी दलों और अंतरराष्ट्रीय कूटनीति को संभाला, वैसी कुशलता नेहरू-इंदिरा युग में भी नहीं देखी गई थी। है न बहुत बड़ा दावा। गैर राजनीतिक माने जाने वाले प्रधानमंत्री के कार्यकाल को ऐतिहासिक बताने वाले यह नहीं स्वीकारते कि वर्तमान गठबंधन सरकार की गड़बड़ियों और विफलताओं से कांग्रेस बुरी तरह कमजोर हुई है। मनमोहन कैम्प इस बदनामी के लिए मीडिया के पूर्वाग्रह, न्यायपालिका एवं सीएजी को जिम्मेदार बताता है। मतलब कांग्रेस और देश मनमोहन राज को नेहरू-इंदिरा काल से अधिक 'महान' मानकर गुलदस्ता भेंट करे। इसे राजनीतिक चातुर्य कहा जाए या राजनीतिक मजबूरियां? सत्ता में बैठने वालों को अपनी कमियों के बजाय उपलब्धियों का गुणगान करना तथा सुनना ही भाता है। इसमें कोई शक नहीं कि पिछले नौ वर्ष बड़ी राजनीतक-आर्थिक चुनौतियों से भरे हुए थे। लेकिन ऐसी चुनौतियां पहले भी कम नहीं थीं। राजनीतिक उठापटक, अकाल, आर्थिक संकट, युद्ध की परिस्थितियों से पूर्व प्रधानमंत्री निपटते रहे। इसलिए 2004 से 2013 को ही सर्वाधिक उपलब्धि भरा मानना ज्यादती होगी। अब सवाल उठता है कि 2014 में सत्ता की विरासत मिलना और संभालना क्या सचमुच बहुत आसान होगा? सभाओं में जय-जयकार और विजयश्री के साथ उत्तरदायित्व की बड़ी फूलमालाएं हर्ष ध्वनियों के साथ पहनी जा सकती हैं, लेकिन रास्ते में कांटे भी कम नहीं होंगे।

संभवतः यह पहला अवसर है जब लोक सभा के निर्धारित चुनाव समय से महीनों पहले सत्ता पर दावेदारी के लिए जोरदार वाक-युद्ध और जोड़-तोड़ शुरू हो गई है। फिर भी कोई बंद कमरे में गंभीरता से यह दावा करने की स्थिति में नहीं है कि 2014 के लोक सभा के चुनाव के बाद सत्ता का सिंहासन किसे मिलेगा? भाजपा के कई नेता जीत पक्की होने का दावा करते हैं, तो कांग्रेस के नेता पिछली सारी गलतियों और गड़बड़ियों को नकारते हुए पुनः गठबंधन की मजबूरी के साथ सत्ता का सपना संजोए हुए हैं। वहीं मुलायम सिंह यादव, नीतीश कुमार, नवीन पटनायक, जयललिता जैसे क्षेत्रीय क्षत्रप तीसरे विकल्प की उम्मीदें संजो रहे हैं। यही कारण है कि राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने भी लोक सभा चुनाव में किसी दल को बहुमत न मिल पाने वाली पूर्व परिस्थितियों के दौरान बनी कानूनी फाइलों को पलटना शुरू कर दिया है। खंडित जनादेश देश के लिए अधिक खतरनाक साबित होगा। सारे दावों के बावजूद आर्थिक स्थितियों के जल्द सुधरने के आसार नहीं हैं। चुनावी मैदान से सिंहासन तक राजनीतिक बारूद बिछाने वाले कम नहीं हैं। किसी भी पार्टी के पास 1977, 1980 और 1984 की तरह राजनीतिक लहर पैदा करने की शक्ति नहीं है। अभी तो पांच राज्य विधानसभाओं के चुनाव में भी चमत्कार दिखाने के दावों की असलियत सामने आ जाएगी। दिल्ली विधान सभा चुनाव में तीसरे विकल्प के रूप में आम आदमी पार्टी के अरविन्द केजरीवाल के दिवा स्वप्न में बहुमत और सरकार का दावा राजनीतक तराजू पर मजाक सा लग रहा है। इसी तरह मिस्टर क्लीन की छवि बना रही राहुल गांधी की टीम जब छत्तीसगढ़ में हत्या के आरोपों से बदनाम युवा उम्मीदवार उतार रही हो, तो फूलों की बरसात की उम्मीद कैसे कर सकती है? फिलहाल सत्ता की विरासत के हर रास्ते पर कांटे अधिक बिछे दिख रहे हैं। पथरीला कांटों भरा रास्ता पार करने के बाद ही सत्ता का सिंहासन मिल सकेगा।

alokmehta7@hotmail.com